अपराजिता : वर्ष 53 अंक 01: 2025
स्थापना वर्ष : 1972 (प्रिंट), 2025 (ऑनलाइन)

भारत का दलीय इतिहास: एक परिचय

अखण्ड प्रताप सिंह
शोध छात्र, राजनीति विज्ञान विभाग

आजादी के पश्चात् हमने गणतान्त्रिक व्यवस्था को अंगीकार किया और ऐसे संविधान का निर्माण किया जिसमें लोकतान्त्रिक पक्ष कूट-कूट कर भरा हो, स्पष्ट रूप से कहा जाय तो भारतीय इतिहास 5000 वर्ष से भी अधिक प्राचीन है किन्तु इसके लम्बे और उतार-चढ़ाव वाले इतिहास में लोकतन्त्रीय प्रयोग 70 वर्ष से कुछ ही अधिक समय पूर्व प्रारम्भ हुआ। यद्यपि विद्वान भारत में लोकतान्त्रिक प्रयोग के समृद्ध इतिहास को व्यक्त करते हैं(अल्टेकर,2001,पृ. 81-82) और दावा करते हैं कि शास्त्रीय और ऐतिहासिक दोनों आधारों से प्राचीन भारतीय गणराज्य प्रजातन्त्र कहे जायेंगे , ठीक उसी प्रकार जैसे प्राचीन इटली और यूनान के राज्य प्रजातन्त्र कहे जाते थे(वही पृ. 82) वास्तव में हम जानते है कि समकालीन लोकतन्त्र और प्राचीन लोकतन्त्र में बहुत अन्तर था लोकतन्त्र का मूल भाव जनता का शासन (डेमॉस-जनता, क्रेशिया-शासन) है, और वर्तमान परिप्रेक्ष्य उसकी अभिव्यक्ति का श्रेष्ठ माध्यम राजनीतिक दल है।

भारत (इण्डिया) जिसे हिन्दुस्तान भी कहा जाता है, मात्र एक देश नहीं अपितु एक उपमहाद्वीप है, जिसकी अपनी विशिष्ट सभ्यता है। यह सभ्यता उथल-पुथल के बावजूद गत पाँच हजार वर्षों से सतत् जीवित रही है, इतिहास इस बात का साक्षी है। इतिहास के पृष्ठपट पर भारत राष्ट्र सर्वाधिक प्रामाणिक और जटिल बहुल समाज के रूप में उभर कर आया है। ऐसी समृद्ध और दुर्लभ पृष्ठभूमि में इस महान राजव्यवस्था को आधुनिक लोकतन्त्रीय संघात्मक प्रणाली के रूप में निर्मित किया जाना अभीष्ट है। एक संघीय राष्ट्र के रूप में भारत की नई पहचान हमारे सफल राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन के दौरान संजोये गये मूल्यों और परम्पराओं द्वारा सुनिश्चित हुई है। इसका उद्देश्य भारत को केवल विदेशी शासन के मुक्त कराना ही नहीं था अपितु देशवासियों को सामन्ती प्रथाओं तथा प्रचलित शोषण तथा असमानतापूर्ण व्यवस्था से भी मुक्त कराना था। मूलतः, यह भारतीय जनता को सभी प्रकार की दासता से मुक्त कराने का एक व्यापक आन्दोलन था चाहे वह दासता परम्परागत हो अथवा समकालीन हो। स्पष्ट रूप से इसका स्वरूप अखिल भारतीय था।

वस्तुतः लोकतन्त्र में राजनैतिक दल राजनैतिक व्यवस्था के अभिन्न अंग बन चुके है और दलीय व्यवस्था के अभाव में लोकतन्त्रीय व्यवस्था का क्रियान्यवन असम्भव प्रतीत होता है राजनीतिक दल राजनीतिक प्रक्रिया को जोड़ने सरल और सुगम बनाने का एक माध्यम है। लार्ड ब्राइस ने इस पर स्पष्ट दृष्टि डालते हुए कहा है कि जनमानस विभिन्न विचारधाराओं का योग है जिसमें विचारों का परस्पर विरोध एवं प्रतिपादन होता है। सामान्यतः समाज के महत्त्वपूर्ण प्रश्नों पर यदि पूर्णतः नहीं तो कम से कम कुछ लोग सामान्य दृष्टिकोंण रखते हैं तथा कुछ इनके विरोधी होते हैं। इन्हीं समूहों तथा संगठित लोगों से राजनीतिक दल का निर्माण होता है(जोन्स,1971,पृ. 148)। एलेन बाल(वाल,1971,पृ. 85.86) ने इसका विस्तृत वर्गीकरण संरचनात्मक एवं संख्यात्मक आधारों पर किया है। किन्तु यदि हम दल प्रणाली की भारतीय सन्दर्भों में विवेचन करें तो इसकी पश्चिमी देशों से तुलना भ्रांति पैदा कर सकती है। सामाजिक तथा वैचारिक दृष्टिकोण से यह तुलना लाभदायक और आंशिक रूप से सही भी है। इस दृष्टि से भारतीय दलों और यूरोपीय दलों में कुछ

समानताएँ भी हैं वे लगभग एक जैसी सामाजिक श्रेणियों के समर्थन पर आधारित है और उनके कार्यक्रम भी एक दूसरे से मिलते-जुलते हैं। दूसरी ओर यह तुलना भारतीय राजनीतिक जीवन की विशेष स्थिति को छिपा लेती है। यह स्पष्ट है कि देश मूलतः ग्रामीण और कृषि प्रधान हो, जहाँ सामंती और अर्ध-सामंती आर्थिक और सामाजिक सम्बन्धों के अवशेष बचे हो, जो अंशतः विदेशी पूँजी के दबाव में हो, उसकी राजनीतिक प्रणाली के लक्ष्य और उद्देश्य निश्चित रूप से पश्चिम यूरोप के उद्योग प्रधान देशों से बिल्कुल अलग होगे। भारत के राजनीतिक दलों को उनकी विचारधारा कुछ भी क्यो न हो। एक भूतपूर्व औपनिवेशिक और आर्थिक रूप से अल्पविकसित देश की समस्याओं से जूझना पड़ेगा।(मिश्र,2002,पृ. 441)

भारत के राजनीतिक दल नाम और रूप के दृष्टिकोण से देखने से पश्चिम यूरोप के राजनीतिक दलों की तरह मालूम होते हैं। नार्मन डी0 पामर के अनुसार जापान और इजराइल को छोड़ कर किसी भी एशियाई देशों में पश्चिमी प्रणाली की दलपद्वति नहीं है।(नारमन,1961,पृ. 182) वस्तुतः लोकतन्त्र किसी भी स्वरूप में राजनीतिक दल के बिना अकल्पनीय है। प्रोफेसर मुनरां के अनुसार लोकतन्त्रीय शासन दलीय शासन का दूसरा नाम है। दल प्रणाली के अभाव में इसका क्रियान्यवन असंभव है। वे असंख्य आकांक्षाओं का मूर्त रूप होता है। रजनी कोठारी दलीय प्रणाली को राष्ट्रीय आंदोलन में विशेष राजनीतिक केन्द्र की उपज मानते हैं।(कोठारी,2005,पृ. 178) ये राजनीतिक केन्द्र थे सामाजिक-आर्थिक रूप से सम्पन्न राजनीतिक अभिजात्य वर्ग शहरी शिक्षित तथा मध्यम एवं उच्च वर्गो के उच्च जाति के लोग यथार्थ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस उस राजनीतिक केन्द्र का संस्थागत प्रकटीकरण था जो कालांतर में राजनीतिक व्यवस्था का आधार बना। समाज के बदलते स्वरूप के साथ राजनीतिक दलों की पद्वति में भी बदलाव आता चला गया। रजनी कोठारी के अनुसार दल प्रणाली की प्रकृति में बदलाव राज्य की परिवर्तित सामाजिक, आर्थिक एवं जनसंख्याकीय रूपरेखा का परिणाम है।(वही) साथ ही यह नागरिक समाज एवं राज्य के बीच सेतु के रूप में विद्यमान है।(सिंह,2008,पृ. 98) भारत में दलीय व्यवस्था का उदय लोकतांन्त्रिक व्यवस्था का केवल परिणाम नहीं है वरन् उपनिवेश काल के राष्ट्रीय आन्दोलन की उपज है। व्यवस्था के विकास को प्रभावित करने वाले तत्वों में जहाँ एक ओर राष्ट्रवादी आंदोलन की पृष्ठभूमि और संसदीय लोकतन्त्र लोकतन्त्र की मांग थी वही दूसरी ओर विशाल सांस्कृतिक, धार्मिक अनेकता तथा सामाजिक आर्थिक पिछड़ेपन और उसमें परिवर्तन की माँग थी।

बम्बई में 28 दिसम्बर 1985 को (मंगलानी,2007,पृ. 385) गठित भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस केवल भारत में ही नहीं अपितु एशिया अफ्रीका के समस्त विकासशील संसार में सबसे पुराना राजनीतिक दल है। भारत में अन्य अनेक राजनीतिक दलों का जन्मदाता भी कांग्रेस है। किन्तु 100 वर्षों से अधिक के अपने विकास काल में कांग्रेस ने कई उतार-चढ़ाव परिवर्तन तथा विभाजन भी देखे हैं।(कोठारी, 1964,पृ. 1161.1173) 1985 में ए0ओ0ह्यूम की अध्यक्षता में कांग्रेस का पहला अधिवेशन हुआ तो उस समय सम्भवतः किसी ने कल्पना नहीं की थी कि यह साधारण संगठन एक दिन विशालकाय रूप धारण कर लेगा। 1985 में स्थापित कांग्रेस ने 1920 के बाद लगभग तीस वर्षों तक राष्ट्रीय आन्दोलन को सक्रिय रूप से संचालित किया। ह्यूम द्वारा प्रेरित कांग्रेस प्रारम्भ में सामाजिक उद्देश्य को लेकर चली थी तथा उसका आकार लघु था। उस समय उसका उद्देश्य भारत की जातियों तथा धर्मों में सहिष्णुता पैदा करना लोगों में सहयोग एवं सद्भावना उत्पन्न करना तथा भारतीयों द्वारा शासकों के साथ विचार विमर्श कर प्रशासन में भाग लेना मात्र था। प्रारम्भिक वर्षों में भले ही कांग्रेस एक साधारण सामाजिक संगठन था, परन्तु धीरे-धीरे इसने एक विशाल रूप धारण कर लिया। 1947 में भारत की स्वतन्त्रता प्राप्ति का श्रेय कांग्रेस को मिला है साथ ही सहमति को संस्थागत रूप देने का श्रेय भी कांग्रेस को जाता है।

वस्तुतः भारतीय राजनीति की संस्थागत व्यवस्था के केन्द्र में कांग्रेस पार्टी थी। कांग्रेस के जरिये ही देश को पहली बार एक एकीकृत नेतृत्व मिला, जो पूरे राष्ट्र के नाम पर कुछ भी कहने का प्राधिकार रखता था। इस प्रक्रिया में कांग्रेस ने एक ऐसी ताकतवर पहचान और वैधता हासिल कर ली जो बहुत लम्बे समय तक बिना किसी चुनौती के कायम रही। सत्तर के दशक से कुछ पहले उसे चुनौतियाँ मिलनी शुरू हुई पर कुल मिलाकर उसी वैधता के अंशों के सहारे कांग्रेस अभी तक टिकी हुई है। यहाँ ध्यान रखने की आवश्यकता है, कि कांग्रेस मूलतः विरोध की राजनीति करने वाले संगठन के तौर पर विकसित हुई थी वह न केवल औपनिवेशिक व्यवस्था का विरोध करती थी, बल्कि भारतीय समाज के परिवर्तन विरोधी पहलुओं के खिलाफ भी काम करती थी। महात्मा गाँधी ने कहा था कांग्रेस अपनी शक्ति उन सदस्यों से प्राप्त नहीं करती जिनके नाम रजिस्टरों में चढ़े हैं, बल्कि उन लाखों लोगों से प्राप्त करती है जो कभी कांग्रेस में शामिल नहीं हुए, किन्तु वे मानते थे कि कांग्रेस उनका प्रतिनिधित्व करती है। स्वाधीनता संग्राम के लम्बे काल में कांग्रेस को उद्योगपतियों, जमींदारों वकीलो, शिक्षित वर्गों, अर्धशिक्षित, मध्यवर्गी शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्रों में अनेक धर्मों अलग-अलग जातियों आदर्शों, विचारों तथा निष्ठाओं को मानने वाले लोगों का समर्थन प्राप्त था। राष्ट्रीय स्वाधीनता के साथ-साथ सामाजिक नवीकरण भी उसका लक्ष्य था। दरअसल बाद वाले लक्ष्य को बेधने के लिए ही वह स्वाधीनता हासिल करना चाहती थी। आजादी मिलने के बाद जब कांगेस शासक दल में बदली तो भी उसने अपना यह दोहरा चरित्र बनाये रखा। शासन करने व शांति व्यवस्था बनाये रखने के साथ-साथ सामाजिक स्तर पर असहमति की आवाज बुलंद करते रहने का द्वैध कांग्रेस के बुनियादी चरित्र में धुल-मिल गया। एशिया और अफ्रीका के कई शासन दलों भीतरी संरचनाएं इस प्रकार के द्वैध से निपट पाने में नाकाम रही थी। किन्तु भारतीय दलीय प्रणाली के विकास का क्रम इसी द्वैध के साथ बढ़ता रहा। उसकी यह विशेषता उसे अन्य देशों की दलीय प्रणाली से अलग करती रही। यह एक ऐसी दलीय प्रणाली थी जिसमें राजनीतिक सम्बन्धों की संस्थाए आधार की तरफ जाती है और वहाँ से नए और नाना प्रकार के हितों को अपने आगोश में समेटती हुई केन्द्र की तरफ गति करके संगठन का रूप प्राप्त करती है। पश्चिमी देशों में यह विकास दूसरे तरीके से हुआ था वहाँ जैसे-जैसे मताधिकार विस्मृत हुआ वो या उससे अधिक संसदीय दल निर्वाचन क्षेत्रों में अपना विस्तार करते चले गये। कांग्रेस की विशेष बात यह थी कि उसने राजनीतिक गोलबन्दी के लिए राष्ट्रीय आंदोलन के नेटवर्क का इस्तेमाल किया, जिससे निकली वर्चस्व और असहमति की संरचनाओं ने सत्ता के नये उत्तराधिकारियों को वैधता और संसाधन तो प्रदान किये हैं साथ ही निरंतर आलोचना और निगरानी के कई सामाजिक राजनैतिक स्रोत भी पैदा कर दिये। यह प्रणाली सार्वभौमिक मताधिकार को पूरे भरोसे के साथ लागू करने का परिणाम थी, जिसके कारण खुल राजनीतिक होड़ को मौका मिला और चुनाव के परिणाम स्वरूप सत्ता में आयी पार्टी की हुकूमत की वैधता स्वीकार करना अनिवार्य हो गया। चुनाव प्रक्रिया से कांग्रेस ने अपना राष्ट्रीय वर्चस्व स्थापित किया। अन्य स्तरों पर भी राजनैतिक सुदृढ़ीकरण हुआ राष्ट्र निर्माण के लिए ग्रामीण क्षेत्रों का समर्थन हासिल किया जा सका, इसी दौरान कांग्रेस का विरोध करने वाली राजनीतिक ताकते मजबूत होती रही और अन्ततः उसे चुनौती देने की हैसियत में आ गई।

सन्दर्भ

बाल एलेन (1971), आधुनिक राजनीति और शासन, मैकमिलन

मंगलानी, रूपा,(2007) भारतीय शासन एवं राजनीति, जयपुर, राज0हि0ग्र0अका0

मिश्र, कृष्णकान्त (2002) भारतीय शासन और राजनीति, दिल्ली, ग्रन्थ शिल्पी

अल्टेकर ए0एस0,(2001) प्राचीन भारतीय शासन पद्धति, वाराणसी, विश्वविद्यालय प्रकाशन

* * *